सामुदायिक आदर्श जीवन

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

सामूदायिक का अर्थ है समूह का जीवन। व्यक्तियों के समूह को समाज और पशुओं के समूह को समज कहा जाता है। सामाजिक जीवन मिलजुलकर परिवार, समाज, राष्ट्र में रहकर प्रेमपूर्वक जीवनयापन करना है। यदि हम रचनात्मक दृष्टि से विचार करेंगे तो सृष्टि से रचनात्मक दृष्टि प्राप्त होगी और यदि नकारात्मक दृष्टि से विचार करेंगे तो नकारात्मक शक्ति प्राप्त होगी। सबके साथ जीने का, चराचर जगत के साथ जीने का भाव होना चाहिए। आदर्श जीवन का अर्थ है समाज में ऐसा आचरण करना जो स्वयं के साथ–साथ दूसरे को भी प्रसन्न रखें। हम किसी को कष्ट न दें। जीयो और जीने दो की भावना हमारा उद्देश्य होना चाहिए। किसी भी प्राणी को अपने आचरण से कष्ट नहीं देना चाहिए। किसी को कष्ट देना, पड़ोसी को पीड़ा देना, बुरा आचरण करना आदर्श जीवन नहीं है। हमारे कार्यों से किसी को कष्ट नहीं होना चाहिए। किसी का शोषण नहीं करना चाहिए। आवश्यकतानुसार वस्तु का संग्रह होना चाहिए। किसी के हक को मारकर जीवन–यापन नहीं करना चाहिए। लालच का त्याग करके इच्छाओं पर नियन्त्रण करना चाहिए। काम, क्रोध, मद, लोभ जीवन को पतन की और ले जाते है। स्वार्थ की चेतना को छोड़कर परार्थ की चेतना और परार्थ की चेतना को छोड़कर परमार्थ की चेतना को जागृत करना चाहिए। भारतीय दर्शन में दुःख का कारण अज्ञान को बताया गया है। वैदिक साहित्य से लेकर सभी धर्मों के साहित्य में यह बताया गया है कि संतोष परमसुख है। जब संतोष रूपी धन आ जाता है तो सभी धन धूल के समान प्रतीत होने लगते है। कितना भी प्राप्त हो जाये परन्तु यदि संतोष नहीं है तो कोई लाभ नहीं। जहां मैं और मेरेपन का भाव रहता है तो इसका दुष्परिणाम बुरा होता है। प्रथम, द्वितीय विश्वयुद्ध का कारण अहं की लड़ाई से प्रारम्भ हुआ और लाखों लोगों की जान गई। धनजन का बहुत नुकसान हुआ। मैत्री, करुणा, प्रमोद, भावना, सहअस्तित्व, स्वयंसत्य खोजने से आदर्श जीवनशैली को प्राप्त किया जा सकता है। वैदिक साहित्य में सामूदायिक और आदर्श जीवन को श्रेष्ठ माना गया है। वहां कहा गया है कि हम साथ–साथ चले, साथ–साथ कार्य करें, साथ–साथ भोजन करें,

हमारे द्वारा धारण किया गया तैज ओजस्वी हो, हम किसी से द्वेष ना करें। सामूदायिक जीवन की यह उदात प्रेरणा है। वहां कहा गया है हमारा मन शुभ संकल्पों वाला हो। हमारे मन में किसी के विरुद्ध बुरा विचार न आवे। मानव जीवन समाज में रहकर ही फलता–फूलता है। यदि मनुष्य को समाज से अलग कर दिया जाये तो उसका जीना मुश्किल हो जायेगा। मनुष्य समाज में ही रहकर समाज से सीखता है और अपने जीवन का निर्माण करता है। बिना समाज के मनुष्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती। अनेकों खोजों से यह पता चला है कि यदि मनुष्य को पशुओं के साथ रख दिया जाये तो उसमें पशुओं के गुण आ जाते है। ऐसा मानव मनुष्य के बीच में रहकर डर महसूस करता है। अतः मनुष्य का विकास समाज में ही संभव है। हम एक परिवार में रहते है, परिवार गांव में रहता है, गावं से समाज बनता है और समाज से राष्ट्र का निर्माण होता है। सद्भावना के द्वारा एक प्राणी दूसरे प्राणी के प्रति अच्छा भाव रखता है। जब भाव शुद्ध होता है तो बुद्धि शुद्ध हो जाती है, जिससे चिन्तन और मनन विधेयात्मक हो जाता है। जीयो और जीने दो की भावना प्रबल हो जाती है। इस सृष्टि में बहुत से प्राणी हैं। सभी के प्रति अपने समान व्यवहार करने का प्रयास करना चाहिए। जैसे दुःख हमें अप्रिय है वैसे ही दूसरों को भी यह अप्रिय होगा, ऐसा महसूस करना चाहिए। जो बात हमें अच्छी लगती है, वही दूसरों को भी अच्छी लगेगी, यही बात हमें सोचनी चाहिए ओर दूसरों का अहित नहीं करना चाहिए। आज क्षुद्र स्वार्थों के कारण आंतकवाद भ्रष्टाचार घूसखोरी बढ़ रही है। अगर इस पर हम विचार करें तो इसके पीछे मुख्य कारण यह प्रतीत होता है कि आज का मानव स्वार्थी हो गया है। अपने तुच्छ लाभ के लिये दूसरों का बड़े से बड़ा नुकसान करने के लिए तैयार रहता है। जीव हिंसा करने में वह हिचकता नहीं। उसे लाभ हो या न हो दूसरों का नुकसान करने के लिए हिंसात्मक साधनों को अपना लेता है। मनुष्य की इसी प्रवृत्ति के कारण पर्यावरण को भी नुकसान हो रहा है। मानव की आकांक्षाएं आकाश के समान अनन्त है उसे कभी पूरा नहीं किया जा सकता है। संयम के द्वार उस पर नियन्त्रण किया जा सकता है। पांच तत्वों से मिलकर सृष्टि का निर्माण होता है और इन्हीं से पर्यावरण बनता है। यदि पर्यावरण सुरक्षित नहीं रहेगा तो मानव का इस संसार में जीवित रहना ही कठिन हो जायेगा। पृथ्वी हमारी माता है। जैसे माता अपने गर्भ में नौ महिने तक

बच्चे का पालन–पोषण करती है और नौ महिने के बाद बच्चे को जन्म देकर बड़ा करती है वैसे ही यह पृथ्वी माता सम्पूर्ण सृष्टि का संरक्षण करती है। माता के अनेक रूप है– लक्ष्मी, सरस्वती और दुर्गा। लक्ष्मी के रूप में वह धन की अधिष्ठात्री देवी कहलाती है। माता घर में धन संचय करती है और परिवार का भरण पोषण करने में महत्वपूर्ण योगदान देती है। सरस्वती के रूप में बालक को शिक्षा देती है और उसे पढ़ा लिखाकर जीवन पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित करती है। दुर्गा के रूप में राक्षसों का संहार भी करती है। दैनिक पूजा पद्धति में पृथ्वी अग्नि वृक्ष इत्यादि को देवता मानकरके पूजा की जाती है। सामूदायिक आदर्श जीवन के लिए परोपकार, समता, सहअस्तित्व की भावना का विकास आवश्यक है।